ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 161-163

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- II, Issues-24, YEAR- April-June-2022

सैन्धव नगरों का पतन और आर्य आक्रमण का सच

डॉ0 अरविन्द कुमार राय

असिस्टेन्ट प्रोफेसर–प्रा० इतिहास विभाग, नागरिक पी०जी०कॉलेज जंघई, जौनपुर (उ0प्र0) भारत

Received-16.06.2022, Revised-22.06.2022, Accepted-28.06.2022 E-mail: drarvindrai1@gmail.com

सारांशः – ***सिन्धु की उपत्यका से समुन्तरित विभिन्न पुरावशेश इस तथ्य के सबल एवं सक्षम साक्षी है कि, यहाँ न केवल सुनियोजित और सुव्यस्थित नगरों का निर्माण किया गया था, अपितु मानव जीवन के भौतिक सुख यथा सम्भव उपलब्ध कराने का प्रयास किया गया था।***

किन्तु नगरीय जीवन की यह धारा बहुत दिनों तक अबिछिन्न नही रह पाई, और सैन्धव नागरिकता आर्यों की ग्रामीणता में विलुप्त हो गयी। सिन्धु जैसी सम्वृद्ध और उत्कर्शित संस्कृति के लिए कहा गया है कि इसका पतन आर्यों के आक्रमण के कारण हुआ।

कुंजीभूत शब्द– उपत्यका, समुन्तरित, पुरावशेश, सक्षम साक्षी, सुनियोजित, सुव्यस्थित, मानव जीवन के भौतिक सुख।

सिन्धु जैसी समृद्ध और उत्कर्शित संस्कृति के बारे में कहा गया है कि इसका विनाश सम्भवतः आर्यों के तूफानी आक्रमण के कारण हुआ। इस सम्बन्ध में हड़प्पा और मोहनजोदड़ो में अस्वाभाविक परिस्थितियों में हुई कुछ मौतों के अतिरिक्त आर्यों के देव इन्द्र, जिन्दे ऋग्वेद में पुरन्दर (पुरविनाशक) कहा गया है, विमर्श का विषय बनाया गया, जो आर्यों की अवधारणा के अनुसार वे दुर्गों के संहार की विलक्षण प्रतिभा से युक्त थे। ऋग्वेद में उन अयसी (धातु निर्मित) अष्ममयी (पत्थर का) लम्बे चौड़े विस्तृत अनेक पुरों और दुर्गों का उल्लेख प्राप्त होता है। ऐसे ही शतभुजी (सौ खम्भों वाले) और शरदी दुर्गो का उल्लेख हैं, अन्यतत्र इन्द्र को पुरन्दर तथा कृष्ण–योनि दासों की सेना का नाश करने वाला एवं पचास सहस्र कृष्ण वर्ण दासों को युद्ध–भूमि में मारने का और पुरों के नाश का उल्लेख हुआ है।

अनेक मन्त्रों में पर्वत–निवासी दासों के सेनापति शंबर के दुर्गों को ध्वंश करने का उल्लेख है, जिनकी संख्या, नब्बे, निन्यानबे और सौ कही गई है। एक स्थान पर इन्द्र और अग्नि से दासों के नगरों को प्रकम्पित करने की प्रार्थना की गई है, क्योंकि आर्यो की अवधारणा के अनुसार ये नगरों को नष्ट करने में समर्थ हैं। इन पुरों अथवा दुर्गों के सम्बन्ध में ह्वीलर का विचार है कि ये सिन्धु के नगर हैं जिनका भेदन इन्द्र ने किया था। इनके अनुसार "परिस्थितियाँ इस बात की गवाह हैं कि इस हत्याकाण्ड का दोश इन्द्र पर आता है। क्योंकि इसे आमान्य कर दिया जाय तो हम हड़प्पा को छोड़कर वे किले वगैरह कहाँ से लायेंगे जिन्हें इन्द्र ने ध्वस्त किया था।

ऋग्वेद में उल्लिखित दुर्गों के विनाष के सम्बन्ध में पीगट का विचार है कि इन्द्र के ऋग्वेद में वर्णित गुण सिन्धु उपत्यका में उपस्थित दुर्गों के संहार की ओर संकेत करते हें। उनके निवासियों के साथ आर्यों का गहरा संघर्ष हुआ होगा तथा इन दुर्गों को जीतने में उन्हें जटिलताओं का अनुभव हुआ होगा, अतएव ऋग्वेद में उल्लिखित दुर्ग–विनाश से वास्तविक तात्पर्य हड़प्पा एवं मोहनजोदड़ों के विनाश से लगता है।

यहाँ यह प्रश्न गम्भीरता के साथ विचारणीय हो जाता है कि क्या वास्तव में ऋग्वेद में वर्णित पुर–विनाश के प्रसंग के तार सैन्धव नगरों से ही जुड़े हुए थे? क्या सैन्धव नगर एवं उत्तर वैदिक नगर दो भिन्न जातियों (आर्य–अनार्य) द्वारा विकसिकत किये गये नगर थे, जो एक–दूसरे द्वारा विकसित सभ्यता के मानकों एवं उपकरणों को अपनाने के लिए तैयार न थे? क्यों आर्यो ने समुन्नत सैंधव नगरीय सभ्यता को अपनाने की अपेक्षा यायावरी एवं ग्रामीण सभ्यता को अपनाया? सैन्धव उपत्यका में स्थित विभिन्न नगरों की विशालता को देखकर उसमें निवास करने वाली एक विशाल जनसंख्या का अनुमान होता है, तो क्या अपने विजय क्रम में आर्यो ने सम्पूर्ण जनसंख्या का बध कर डाला था, और लगभग एक सहस्राब्दी के काल सम्पुट में पुष्पित–पल्लवित एवं विस्तृत भू–क्षेत्र में प्रसरित समुन्नत एवं समृद्ध सभ्यता का विनाश कर डाला था?

वस्तुतः आर्य जाति की परिकल्पना के पीछे यह तथ्य रहा है कि ऋग्वेद में आर्यों और दासों का उल्लेख बार–बार आता है और इन उल्लेखों से यह प्रकट होता है कि इके बीच सम्बन्ध तनावपूर्ण थे। इसी आधार पर 'आर्य–आक्रमण' को प्रमाणित करने के लिए उतावले विद्वानों ने आर्यों को आक्रमणकारी कबीला और दासों को स्थानीय मूल निवासियों के रूप में पेश करना आरंभ कर दिया।

इस सम्भावना की असम्भाव्यता पर मत व्यक्त करते हुए प्रो० उदयनरायण राय का मत है कि जहाँ तक हड़प्पा कालीन नगरों पर 'आर्य–जाति' के आक्रमण सम्बन्धी सिद्धान्त का प्रश्न है, यह काल्पनिक होने के अतिरिक्त राजनीति से प्रेरित भी है। सर विलियम जोन्स एवं मैक्समूलर जैसे विद्वानों ने तुलनात्मक भाषा–विषयक कल्पना के आधार पर इण्डो आर्य (आर्य)

अनुरूपी लेखक / संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- II, Issues-24, YEAR- April-June-2022

जाति की कल्पना की, जो धीरे–धीरे समतावादी भाषा विज्ञान के प्रति सम्मान रखने वाले विद्वानों द्वारा समर्थित किया गया, परिणाम स्वरूप 'आर्य' शब्द ने जाति बोधक रूप धारण कर लिया, जिसका प्रयोग इस अर्थ में रूढ़ हो चला।

वास्तव में, 'आर्य' को जाति के अर्थ में लेना सर्वथा दोषपूर्ण है। 'आर्य' शब्द का प्रयोग भाषा और संस्कृति के वैदिक ग्रन्थों के ही सम्बन्ध में सार्थकता रखता है। भारतम में आर्य भाषाओं का प्रसार यह नहीं सिद्ध करता है कि प्राचन काल में आधुनिक यूरोपितयों की तरह भारत में एक गोरी प्राजाति बाहर से आयी थी; जिसने यहाँ के मूल निवासियों पर जबर्दस्ती अपनी भाषा, धर्म और सत्ता आरोपित की इस प्रकार की कल्पना अमरीका और अफ्रीका में पाश्चात्य जातियों के इतिहास के प्रतिमानों पर पर्याप्त प्रमाणों के बिना ही प्रचलित हो गयी है। उत्तरी अमेरिका में मूल प्रजातियों का विजेताओं ने संहार कर दिया, 'अफ्रीका' से दासों के रूप में वहाँ लायी गई काली प्रजाति के लोगों के प्रति गोरों का भेदभाव सुप्रकट है। यही स्थिति आस्ट्रेलिया में और रंगभेद की व्यवस्था दक्षिणी अफ्रीका में हुई है। मध्य और दक्षिण अमरीका में व्यापक प्रजातीय संस्कार के साथ–साथ विजेताओं का धर्म, भाषा और संस्कृति सम्पूर्णतया आरोपित की गयी है। इन्हीं विजय के प्रकारों को मन में रखकर भारतीय आर्य–अनार्य इतिहास की कल्पना की गयी है।

यदि देखा जाय तो जाति बोधक अर्थ में 'आर्य' शब्द का प्रयोग यूरोपीय विद्वानों की कोरी कल्पना मात्र ही प्रतीत होती है, जो कि उन्नीसवीं सदी के अन्तिम चरण में प्रचलित की गई। इसके पूर्व यह शब्द वस्तुतः संस्कृति–बोधक था। यह एक सम्मन सूचक शब्द रहा है, जिसका पारंपरिक प्रयोग प्राचीन ग्रंथों में आदरणीय, सम्माननीय, कुलीन, नियम एवं धर्म के प्रति निष्ठावान, गुणवान, चरित्रवान तथा सम्बोधन की आदरणीय पद्धति के अर्थ में होता रहा है। संस्कृति नाटकों में नट–नटी सम्बाद में 'आर्य' एवं 'आर्यपुत्र' सदृश्य संबोधन श्रेष्ठ जनों के प्रति प्रयुक्त है, इस आलोक में सिद्ध होता है कि जाति–बोधक रूप में आर्य शब्द का प्रयोग एक मिथक है, न कि वास्तविकता। 'आर्य' का मौलिक या नैयक्तिक अर्थ जो रहा हो उसका रूढ़ अर्थ समाज में ऊँची स्थिति और प्रतिष्ठा को दिखाता है, वह किसी जनसमुदाय का नाम प्रजातीय या जनजातीय, नहीं प्रतीत होता।

वास्तव में, वैदिक ग्रन्थों के अतः साक्ष्यों में आर्य शब्द का प्रयोग स्थायी रूप से बस गये, कृषि कार्य में प्रवृत्त तथा यज्ञादि कृत्यों को करने वाले सुसंस्कृत लागों के लिए प्रयुक्त हुआ है, वहीं 'दस्यु' तथा 'दास' से वे वैदिक आर्य जन अभिप्रेरित हैं, जो असभ्य स्थिति में थे, लूट–पाट करते और आर्य–जनों के धार्मिक कृत्यों को नहीं करते थे। उनके कालेपन का उपमान काले मेघों के रंग से ग्रहण किया गया है, जिनका भेदन इन्द्र के वृत्त के साथ हुए संग्राम में किया गया था, 'कालापन' उनके दृश्ट प्रवृत्ति का परिचायक है। रूप में वे आर्य–जनों से भिन्न नहीं थे, अन्यथा ऋग्वेद के मन्त्राकार ने आर्यों और यज्ञ विरोधी दस्यु में पहचान करने की बात क्यों करता?

ऋग्वेद में आर्य और दास अथवा दस्यु के बीच संघर्ष ही नहीं अपितु आर्यों के जनजातीय समाज में भी आन्तरिक द्वन्द्व के साक्ष्य मौजूद हैं। एक युद्ध–गीत में 'मन्यु' मूर्तिमान क्रोध से याचना की गयी है कि वे आर्य और दास दोनों तरह के शत्रुओं को पराजित करने में सहायक हो। एक स्थल पर कहा गया है कि इन्द्र और वरूण ने सुदास के विरोधी दासों ओर आर्यों का संहार कर उसकी रक्षा की। सज्जन और धर्मपरायण लागों के ओर से दो मुख्य ऋग्वैदिक देवताओं, अग्नि और इन्द्र से प्रार्थना की गई है कि वे आर्यो और दासों के दुश्टतापूर्ण कार्यों और अत्याचारों को शमन करें। चूँकि आर्य यहाँ खुद मानव जाति के दुष्मन थे, अतः आष्चर्य नहीं कि इन्द्र ने दासों के साथ–साथ आर्यों का भी विनाश किया हो। कहा जाता है कि अग्नि ने अपनी प्रजा की भलाई के लिए समतल भूमि और पहाड़ियों में स्थित संपत्ति को अपने कब्जे में कर लिया और अपनी प्रजा के दास और शत्रुओं को हराया। इन अंषों में यह बातया गया है कि जो आर्य दुश्मन समझे जाते थे, उनकी भी संपत्ति छीन ली जाती थी और उन्हें आर्योत्तर लोगों की भाँति कंगाल बना दिया जाता था। ऋग्वैदिक आर्यों में बहुत पहले ही अन्तरिक संघर्ष की महत्वपूर्ण सूचना प्राप्त होती है, जिसका महत्वपवूर्ण प्रमाण 'दषराज युद्ध' है, जो ऋग्वेद की एक मात्र महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटना है। यह युद्ध मुख्यतः ऋग्वैदिक आर्यो की दो मुख्य शाखाओं पुरूओं और भरतों के मध्य लड़ा गया था।

इस प्रकार ऋग्वेद के आन्तरिक साक्ष्य का पर्यावलोकन विभिन्न संघर्षों की सूचना तो देते हैं किन्तु इन संघर्षो को सैन्धव नगरों के पतन के कारण के रूप में नहीं माना जाना चाहिए। आर्यों को टकराव जिब कबीलों से था, वे सभ्य थे ही नहीं, वे आचार, विचार, उत्पादन, नैतिक–मापदण्ड सभी दृष्टियों से वैदिक जनों से पिछड़े दिखाये गये हैं, और ऐसे लोग हड़प्पा सभ्यता के नागरिक तो हो ही नहीं सकते। वैदिक जनों के शत्रु सभ्यता में उनसे आगे बढ़े हुए थे, यह भ्रम पुर शब्द की गलत व्याख्या और इसके साथ ही इस भ्रान्ति पर टिका हुआ है कि स्वयं वैदिक आर्य पुरों से अपरिचित थे, या यदि पुरों से उनका कोई सम्बन्ध था तो इसके ध्वंसक के रूप में ही। यदि ह्वीलर ने पुरंदर इन्द्र को दिवोदास के लिए शंबर की पुरियों या दुर्गों का ध्वसंक मान भी लिया, तो उन्हें इस बात का ध्यान तो रखना ही चाहिए था कि स्वंय दिवोदास की स्थिति हड़प्पा और

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- II, Issues-24, YEAR- April-June-2022

मोहनजोदड़ों की सापेक्षता में क्या है? वह सरस्वती तट का निवासी है और इससे पहले से उसके पूर्वज सरस्वती तट पर विराजमान हैं। इस दृष्टि से यदि इसे नगरों या दुर्गों पर हमला माना भी जाय, तो कम से कम यह हमला भारत में ही बसे दो प्रतिस्पर्धियों में से एक के द्वारा दूसरे पर माना जाना चाहिए।

मोहनजोदड़ों से प्राप्त कुछ नरकंकाल जिनकी मृत्यु का कारण वाह्य आक्रमण माना जाता है, भी इसे प्रमाणित करने के सक्षम साक्ष्य नहीं जान पड़ते। के०आर० केनेडी ने उन नरकंकालों का बड़ी गहराई के साथ अध्ययन किया है और इनका मत है कि इनमें से किसी पर भी चोट के लक्षण नहीं है। प्रो० जी०एफ० डेल्स का मत है कि मोहनजोदड़ो से प्राप्त नरकंकाल कोई एक काल के न होकर विभिन्न कालों के हैं और सिन्धु नदी में अलग–अलग समयों के बाद आने के कारण इस नगर का विनाष हुआ, परिणाम स्वरूप ये अस्थि–पंजर पृथक स्तरों से प्राप्त होते हैं।

निष्कर्ष– इस प्रकार आर्य आक्रमण की संकल्पना निराधार है, सैन्धव नगरों के विनाश के अन्य कारणों को खोजा जाना चाहिए। इसका कारण दैवी आपदा के रूप में खोजा जाना उचित प्रतीत होता है, जिसने तत्कालीन नगरों तथा नगर जीवन के विभिन्न उपकरणों को विनष्ट कर डाला होगा, किन्तु तकनीकी ज्ञान से लैस नागरिक प्रतिकूल परिस्थितियों में भी जीवित रहने के लिए बाध्य हए होंगे। और ज्यों की अनुकूल आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक परिस्थितयाँ सम्भव हुई होगी, तथा कथित दूसरी नगरीय क्रान्ति के सुसुप्त बीज प्रस्फुटित हो गये होंगे। कदाचित् इसीलिए सैन्धव नगरों एवं उत्तर–वैदिक नगरों के अभियान्त्रिक ज्ञान में हमें कोई मूलभूत अन्तर दिखाई नहीं देता।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. ऋग्वेद, सायण की टीका सहित, पाँच खण्ड वैदिक संशोधन मण्डल, पूना, 1938–51.
2. ग्रिगोरी आर० पोसेल्स द्वारा संपादित हडप्पन सिविलाइजेशन, डेल्स का मोहनजोदड़ो एण्ड मिस्ल्वेनरी शीर्शक लेख।
3. दास, ए०सी० – ऋग्वैदिक इण्डिया, कोलकाता वि०वि० प्रकाशन, 1921.
4. पाण्डेय, गोविन्द चन्द्र, वैदिक संस्कृति, प्रथम संस्करण, इलाहाबाद, 2001, लोकभारती प्रकाशन।
5. पिगट, एस०, प्री हिस्टारिक इण्डिया, 1950 लन्दन।
6. राय, उदयनरायण, 'प्राचीन भारत में नगर तथा नगर–जीवन (द्वि०सं० एवं परिवद्वित सं०), लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1998.
7. सिंह, भगवान, पूर्वोक्त, हड़प्पा सभ्यता और वैदिक साहित्य, तृतीय संस्करण, राधा कृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1997.
8. ह्वीलर, मर्टीमर, सिविलाइजेन आफ द इण्डलस वैली एण्ड वियांण्ड, 1953, लन्दन।

*****